आत्म - कथन

भाग - १

आचार्य सत्यनारायण गोयन्का

आत्म-कथन

भाग - १

आचार्य सत्यनारायण गोयन्का

विपश्यना विशोधन विन्यास

धम्मगिरि, इगतपुरी

विषय-सूची

प्राक्कथन [v]

भगवान बुद्ध ने भारत को दुर्बल बनाया १

युद्धपूर्व का बरमा निवास १

मेरा भारत आगमन ३

पं. विद्याधर शास्त्री ४

स्वदेश-प्रेम ६

आजादी में नेताजी का योगदान ११

रक्तरंजित आजादी १२

पुनः जन्मभूमि बरमा लौटा १३

बरमा का सार्वजनीन जीवन १५

नेहरूजी से भेंट १७

साहित्य-सृजन धर्मिता १९

देश की आजादी पर एक कविता १९

गांधी, नेहरू और पटेल २०

महात्मा गांधी २०

सरदार पटेल २०

पं. नेहरू २१

नेताजी सुभाषचंद्र बोस २२

होली की धमाल २३

वीर रस की अन्य कविताएं २५

मीना बाजार २६

बलिदानी पन्ना २७

हिंदी साहित्य का अध्ययन ३१

मेरी शिवभक्ति ३७

एक अन्य घटना ३८

एक और घटना ४०

एक और घटना ४१

रीतिकालीन हिंदी कवि ४४
जातिपांतिजनित दोष ५०
शुद्धिकरण ५१
उपनयन संस्कार ५६
अतिशूद्र का उपनयन संस्कार ५८
जाति-बहिष्कार का भय ५९
छुआछूत की पराकाष्ठा ६०
इस दुर्भावना के कुछ शर्मनाक उदाहरण ६१
इस संदर्भ में एक दर्दनाक घटना ६१
ऐसी ही एक और घटना ६३
छिः कला ६४
जापानी युद्ध तथा तदनंतर ६६
एक व्यक्तिगत दर्दनाक अनुभव ६८
मेरे विद्यार्थी जीवन की कुछ एक स्मृतियां ७१
आर्यसमाज ७३
एक अन्य दर्दनाक घटना ७३
प्रचंड प्रतिक्रिया ७४
वह तूफानी कविता ७५
पूर्वी एशिया के बुद्धानुयायी देश ७७
भगवद्गीता ७८
एक आकस्मिक घटना ७९
तिपिटक ८४
बुद्ध शासन ८७
मेरा भाग्य जागा! ८९
बुद्धवाणी का अध्ययन ९३
देश की सुरक्षा ९६
पूर्व भूमिका ९७

विपश्यना साहित्य **९९**
विपश्यना केंद्र **१०२**

प्राक्कथन

आत्मकथन में आत्मविज्ञापन और आत्मश्लाघन के दूषण प्रत्यक्ष या परोक्षरूप में अंतर्निहित रहते ही हैं, इस खतरे को जानते-समझते हुए भी मैं इस विषय पर यदा-कदा लेखनी उठाता रहता हूं। मैंने इसे आवश्यक इसलिए समझा कि आज के ही नहीं, भविष्य के भी विश्वव्यापी बहुसंख्यक विपश्यी साधक-साधिकाओं की यह जिज्ञासा-पूर्ति हो सके कि मैं अध्यात्म के कैसे वातावरण में जन्मा और पला, तत्पश्चात किन-किन बहुरंगी मंजिलों में से गुजरता हुआ यहां तक पहुँचा। इस जीवन की अब तक की अध्यात्म की बहुआयामी यात्रा में मुझे कब-कब, कहां-कहां, कैसे-कैसे अनुभव हुए; यह साधकों की केवल कौतूहल-पूर्ति की ही सामग्री बन कर न रह जाय, बल्कि उनका ज्ञानवर्धन भी करे और मार्गदर्शन भी। उनके लिए यह भी स्पष्ट हो जाना आवश्यक है कि यात्रा के किसी भी पड़ाव में से गुजरने का आज मुझे रंचमात्र भी न क्षोभ है, न पछतावा। किसी भी वृद्ध व्यक्ति के अपने बचपन के खेल-खिलौनों से लेकर युवा, प्रौढ़ और परिपक्व अवस्थाओं के सभी खट्टे-मीठे अनुभवों की स्मृतियां होठों पर मुस्कान ही लाती हैं। इससे यह संतोष भी होता है कि अध्यात्म के अमुक-अमुक क्षेत्रों में से न गुजरता तो उनके अनुभवों से वंचित रह जाता, अपरिचित रह जाता। शायद धर्म यही चाहता था, या यों कहूं कि मेरे पूर्वजन्मों के संस्कारों की भवधारा यही चाहती थी कि मैं उन भिन्न-भिन्न पड़ावों का स्वयं अनुभव करके अपनी वर्तमान उपलब्धि का सही मूल्यांकन कर सकूं।

चाहता हूं कि इस बढ़ी हुई उम्र की, बढ़ी हुई व्यस्तता में जब तक स्मरणशक्ति काम कर रही है, तब तक जितना हो सके, उतना समय निकाल कर अपने शोधपरक अध्ययन और विपश्यनापरक अनुभवों को शब्दबद्ध कर दूं। मैं अब खूब समझ गया हूं कि नितांत अज्ञान अवस्था के कारण महज लोक-प्रचलित मान्यताओं से प्रभावित होकर मैं भगवान बुद्ध

की परम पवित्र और पूर्णतया निष्कलुष शिक्षा के प्रति कितना भ्रांत रहा और इस कारण इसे मानव समाज के लिए, और विशेषकर अपने देश के लिए, हानिप्रद मानता रहा। किसी भी निर्दोष व्यक्ति पर अथवा उसकी निर्दोष शिक्षा पर लगे मिथ्या मनगढंत लांछनों को स्वीकार कर उसे बदनाम करना साधारण नहीं, जघन्य पाप है।

यह मेरा दुर्भाग्य था कि मैं वर्षों इस जघन्य पाप का भागी बना रहा। उस महापुरुष की कल्याणी विपश्यना से लाभान्वित होने के बाद बुद्धवाणी का अनुशीलन करने और तदनंतर अपने यहां के अनेक पौराणिक ग्रंथों का भी अनुशीलन करने पर अपने इस जघन्य दुष्कर्म के प्रति जागरूक हुआ। तब मेरा मानस अपराधजन्य लज्जा से विचलित हो उठा। यह सत्य है कि मैंने यह पाप जानबूझ कर नहीं किया। द्वेष-बुद्धि से अथवा स्वार्थ-बुद्धि से नहीं किया। अहंपोषणहित भी नहीं किया। जो किया, वह सुनी-सुनायी, पढ़ी-पढ़ायी मिथ्या बातों से भ्रांत होकर किया और वर्षों करता ही रहा। इन पाप-कर्मों का कैसा भयानक दुष्परिणाम होगा, इसे जब याद करता हूं तब रोंगटे खड़े हो जाते हैं। दुर्भाग्य से अपने देश में कुछ एक निराधार मिथ्या बातें सदियों से इस प्रकार प्रसिद्धि पा चुकी हैं और सर्वमान्य हो चुकी हैं कि उनसे प्रभावित होकर मेरी तरह लगभग सारे देशवासी जाने-अनजाने, चाहे-अनचाहे इसी जघन्य दुष्कर्म में लिप्त हैं। मुझे यह उचित लगा कि जिस सच्चाई की जानकारी प्राप्त कर मैंने अपने आपको इस दुष्कर्म से उबारा है, उसे अधिक नहीं तो कम-से-कम उन लोगों तक अवश्य पहुँचाऊं, जिन्होंने बुद्ध की विपश्यना विद्या का लाभ उठाया है और उठा रहे हैं, ताकि वे वास्तविकता को समझें और अनजाने में इस दोष के भागीदार न बनें।

पूर्वकाल में बुद्ध की शिक्षा पर निराधार लांछन इसी कारण लग सके कि बुद्ध की मूल वाणी और प्रयोगात्मक विपश्यना विद्या देश से कब की विलुप्त हो चुकी थी। सौभाग्य से इतनी सदियों तक पड़ोसी बरमा देश में अपने मौलिक शुद्ध रूप में सुरक्षित रहने के कारण अब यह पुनः स्वदेश लौटी है। विपश्यना विश्व विद्यापीठ के 'विशोधन विभाग' द्वारा आधुनिक वैज्ञानिक युग के नवीनतम उपकरणों का उपयोग करके तिपिटक की संपूर्ण

मूल बुद्धवाणी, उनकी अर्थकथाएं, टीकाएं, अनुटीकाएं आदि पालि के अब तक उपलब्ध सभी ग्रंथों के कुल ५९,१५० पृष्ठों के ९२,८५,७५५ शब्दों को एक सघन तश्तरी (सीडी रोम) में निवेशित कर लिया गया है। साथ-साथ महायानी परंपरा के अनेक संस्कृत ग्रंथ भी निवेशित कर लिये गये हैं। इसके अतिरिक्त छांदस और संस्कृत भाषा के लगभग सभी महत्त्वपूर्ण ग्रंथ जैसे कि वेद, उपनिषद, रामायण, महाभारत, पुराण, स्मृतियां ही नहीं, जैन परंपरा के भी अनेक ग्रंथ जोड़े जा चुके हैं। जो-जो बचे हैं उनके निवेशन का कार्य भी चल रहा है। इस विशाल साहित्य-संग्रह के किसी भी शब्द, पद, श्लोक अथवा गाथा को तत्काल ढूंढ निकालने की सरल और आश्चर्यजनक विधि इस तश्तरी में उपलब्ध है। इस कारण तुलनात्मक अध्ययन द्वारा शोधकार्य में महती मदद मिलती है। जिन विपश्यी साधकों की इस ओर रुचि हो वे इस अनुसंधान में हाथ बटायें, इसका लाभ उठायें और सच्चाई को समझें।

"अहिंसा परमो धर्मः" के पद को लेकर बुद्ध पर यह लांछन लगा कि इसकी शिक्षा देते हुए अहिंसा को उस चरम सीमा तक खींच लिया गया जिससे कि देश कायर, कमजोर और गुलाम हो गया। यह मिथ्या मान्यता अपने देश के अनेक लोगों के मानस में बहुत गहराई से पैठ गयी है। भारत आने के कुछ ही वर्षों बाद मेरी नजर एक लेख पर पड़ी। यह पिलानी से प्रकाशित 'मरुभूमि' नामक मासिक पत्रिका में छपा था। लेख किसी विश्वविद्यालय के इतिहास विभाग के प्रोफेसर द्वारा लिखा गया था। बुद्ध की शिक्षा पर अतिशय अहिंसा का दोष दिखा कर इससे देश की जो अपार हानि हुई उसकी व्याख्या की गयी थी। इसे पढ़ कर लेखक पर बड़ी करुणा जागी। मैं भलीभांति समझ सकता था कि लेखक को न भगवान बुद्ध से शत्रुता है और न उनकी शिक्षा से। उसका लेख न द्वेषभाव से लिखा गया था, न किसी सांप्रदायिक पक्षपात से प्रभावित होकर। इतिहास की पाठ्यपुस्तकों अथवा अन्यत्र जो पढ़ा होगा और जो स्वयं विद्यार्थियों को पढ़ाता होगा, उसी के आधार पर लिखा होगा। परंतु उसमें तथ्यों की अनेक भूलें थी। मैंने उसे इन भूलों की ओर इशारा करते हुए एक लंबा पत्र लिखा।

फिर सोचा कि इससे क्या लाभ होगा? इस आशय के लेख अनेक पत्र-पत्रिकाओं में यदाकदा प्रकाशित होते ही रहते हैं। उनमें से कुछ तो स्पष्ट ही सांप्रदायिक द्वेषभाव से लिखे होते हैं। परंतु अधिकांश लेखों का आधार तथ्यों की जानकारी न होना ही है। ऐसी भूलें लोग न करें, विशेषकर विपश्यी साधक तो न ही करें; इसी उद्देश्य से इस महत्त्वपूर्ण विषय पर अब तक किये गये अनुसंधान के आधार पर कुछ प्रकाश डालना आवश्यक है जिससे लोग सच्चाई को जानें, समझें और निराधार निंदा के दोष से बचें। धर्म के क्षेत्र में सच्चाई का आधार ही कल्याणप्रद होता है।

धर्मपथ के सभी पथिकों का मंगल हो! कल्याण हो!

कल्याणमित्र,
सत्यनारायण गोयन्का